

**इलाहाबाद उच्च न्यायालय****लखनऊ****धारा 482 के अंतर्गत प्रार्थनापत्र संख्या – 10203/2024**

अशोक कुमार चौधरी

...प्रार्थी (गण)

बनाम

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो / भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो, लखनऊ

...विरोधी पक्षकार (गण)

प्रार्थी (गण) के अधिवक्ता: – पूर्णेंदु चक्रवर्ती, ऐश्वर्या सक्सेना, प्रांजल जैन, रोहित कनौजिया

विरोधी पक्षकार (गण) के अधिवक्ता :– अनुराग कुमार सिंह

न्यायालय कक्ष संख्या – 14**माननीय न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी**

- हमने प्रार्थी के अधिवक्ता श्री पूर्णेंदु चक्रवर्ती, वरिष्ठ अधिवक्ता, को सुश्री ऐश्वर्या सक्सेना, अधिवक्ता की सहायता से, और प्रतिवादी/केंद्रीय जांच ब्यूरो का प्रतिनिधित्व कर रहे अधिवक्ता श्री आकाश प्रसाद, अधिवक्ता और श्री हिमांशु सिंह, अधिवक्ता के तर्कों को सुना और अभिलेखों का परिशीलन किया।
- धारा 482 दंड प्रक्रिया संहिता / 528 भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता के अंतर्गत दायर इस आवेदन के माध्यम से याचिकाकर्ता ने धारा 7 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम और धारा 120-बी भारतीय दंड संहिता सहपठित धारा 7 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अंतर्गत प्रथम सूचना रिपोर्ट संख्या आरसी 00662023ए0030 से उद्भूत विविध वाद संख्या 36/2024 में माननीय विशेष न्यायाधीश, भ्रष्टाचार निवारण केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो, न्यायालय संख्या 4, लखनऊ द्वारा दिनांक 05.02.2024 को पारित आदेश की वैधता को चुनौती दी जिसके द्वारा विचारण न्यायालय ने अपराधों का संज्ञान लेते हुए याचिकाकर्ता को सुनवाई के लिए तलब किया है। याचिकाकर्ता ने केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा उपरोक्त प्रथम सूचना रिपोर्ट. के अनुसरण में की गई जांच के बाद

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आरोपपत्र दिनांक 28.12.2023 और उससे संबंधित समस्त परिणामी कार्यवाही को रद्द करने का अनुरोध भी किया है।

3. संक्षेप में, वाद के तथ्य यह हैं कि निर्मल एंटरप्राइजेज के मालिक अभिनव चौबे ने केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो / भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो लखनऊ के पुलिस अधीक्षक को तहरीर दी कि उनकी फर्म को उत्तर-पूर्वी रेलवे, गोरखपुर को ट्रांसफार्मर की आपूर्ति के लिए निविदा प्रदान की गई थी और 25 केवी क्षमता के 32 ट्रांसफार्मर की आपूर्ति के लिए दिनांक 03.04.2023 को एक क्रय आदेश जारी किया गया था। उन्होंने दिनांक 31.10.2023 को ऑनलाइन माध्यम से अंतिम बिल जमा किया था, जो लेखा विभाग में लंबित है। जितेंद्र के माध्यम से लेखा विभाग में कार्यरत प्रार्थी अशोक कुमार चौधरी 32,000 रुपये रिश्त की मांग कर रहा था। शिकायतकर्ता ने बताया कि प्रार्थी ने 5 दिसंबर 2023 और 7 दिसंबर 2023 को व्हाट्सएप कॉल के माध्यम से सीधे रिश्त की मांग की थी और उसे सह-अभियुक्त जितेंद्र के गूगल पे खाते में धन अंतरित करने का निर्देश दिया था। इसके बाद जितेंद्र ने भी प्रार्थी अशोक कुमार चौधरी के लिए रिश्त की मांग करते हुए कई फोन कॉल/व्हाट्सएप कॉल किए।

4. शिकायत की गोपनीय जांच के बाद 13 दिसंबर 2023 को प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। एक जाल बिछाया गया। शिकायतकर्ता ने गूगल पे के माध्यम से सह-अभियुक्त जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव को 7,000 रुपये अंतरित किये। सह-अभियुक्त जितेंद्र को 14 दिसंबर 2023 को शाम लगभग 7:30 बजे उसके आवास से गिरफ्तार किया गया और प्रार्थी को रात लगभग 11:30 बजे गिरफ्तार किया गया। उसी तिथि को सिंचाई विभाग के अतिथि गृह से उन्हें उनके कार्यालय से फोन करके बुलाया गया।

5. जांच के बाद केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने दिनांक 28.12.2023 को आरोपपत्र दाखिल किया और विचारण न्यायालय ने आदेश दिनांक 05.02.2024 द्वारा अपराधों का संज्ञान लेते हुए प्रार्थी को सुनवाई के लिए तलब किया।

6. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने आवेदन का विरोध करते हुए एक प्रति-शपथपत्र दाखिल किया है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया है कि कई दूरभाष वार्तालाप रिकॉर्ड किए गए हैं, जिनसे याचिकाकर्ता द्वारा रिश्त की मांग सिद्ध होती है। केवल 21.12.2023 के एक ध्वनि पहचान ज्ञापन में याचिकाकर्ता अशोक कुमार चौधरी के स्थान पर सह-अभियुक्त जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव का नाम गलती से टंकित हो गया है। हालांकि, शेष वार्तालाप शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के बीच हुए हैं, जिनके प्रतिलेख प्रति-शपथपत्र के साथ संलग्न हैं।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वार्तालाप के प्रतिलेख प्रथम दृष्टया शिकायतकर्ता के बिलों को संसाधित करने के लिए याचिकाकर्ता द्वारा रिश्त की मांग को सिद्ध करते हैं।

7. याचिकाकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पूर्णेंद्र चक्रवर्ती ने आरोपपत्र और संज्ञान आदेश की वैधता पर पश्च उठाते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17-ए के अंतर्गत आवश्यक अभियोजन स्वीकृति प्राप्त नहीं की गई है, इसलिए जांच, आरोपपत्र दाखिल करने और अपराधों का संज्ञान लेने सहित सम्पूर्ण कार्यवाही दूषित है।

8. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का द्वितीय तर्क यह है कि रिश्त की राशि कथित तौर पर सह-अभियुक्त जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव द्वारा मांगी और प्राप्त की गई है, न कि याचिकाकर्ता द्वारा। सह-अभियुक्त जितेंद्र शिकायतकर्ता सहित कई आपूर्तिकर्ताओं के लिए फ्रीलांसर के रूप में कार्य करता है और उसने शिकायतकर्ता के अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य किया है। उन्होंने यह भी कहा है कि याचिकाकर्ता को कोई भी धनराशि अंतरित या भुगतान नहीं की गई है और उससे कुछ भी बरामद नहीं हुआ है।

9. श्री चक्रवर्ती का तृतीय तर्क यह है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दिनांक 13.12.2023 को 16.35 बजे दर्ज की गई थी, जबकि याचिकाकर्ता ने शिकायतकर्ता की भुगतान प्रक्रिया 13.12.2023 को 09.18.28 बजे ही संपन्न कर दी थी। भुगतान प्रक्रिया संपन्न करने के बाद, याचिकाकर्ता के पास बिल संसाधित करने के लिए रिश्त मांगने का कोई अवसर ही नहीं था।

10. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का चतुर्थ तर्क यह है कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने अपने प्रतिशपथपत्र में यह स्वीकार किया है कि शिकायतकर्ता के दूरभाष पर हुए वार्तालाप को त्रुटिवश शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के मध्य वार्तालाप बताया गया है, जबकि वास्तव में वह वार्तालाप शिकायतकर्ता और सह-अभियुक्त जितेंद्र के बीच हुआ था। इसलिए, शिकायतकर्ता को कथित अपराध से संबद्ध करने के लिये कोई भी साक्ष्य नहीं है।

11. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का अंतिम तर्क यह है कि, हालांकि शिकायत में यह आरोप लगाया गया है कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 05.12.2023 और 07.12.2023 को शिकायतकर्ता को रिश्त मांगने के लिए फोन किया था, लेकिन इस आरोप को सिद्ध करने वाला कोई भी साक्ष्य नहीं है।

12. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उन निर्णयों का हवाला दिया है जो 'राज्य द्वारा सीबीआई बनाम डॉ. अनूप कुमार श्रीवास्तव: (2017) 15 एससीसी 560' और 'नीरज दत्ता बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार): (2023) 4 एससीसी 731' वादों में प्रदान किये गए थे।

13. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता के प्रथम तर्क के उत्तर में, प्रतिवादी (केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो) के अधिवक्ता श्री आकाश प्रसाद ने न्यायालय का ध्यान 'भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम' की धारा 17-क की ओर आकर्षित किया है, जो निम्नवत है: -

17-क. लोक सेवक द्वारा उसके शासकीय कृत्यों या कर्तव्यों के निर्वहन में की गई सिफारिशों या लिए गए विनिश्चय

के संबंध में अपराधों की जांच या पूछताछ या अन्वेषण- (1) कोई पुलिस अधिकारी, किसी ऐसे अपराध में कोई जांच या पूछताछ या अन्वेषण, जिसे इस अधिनियम के अधीन लोक सेवक द्वारा अभिकथित रूप से कारित किया गया है, वहां ऐसा अभिकथित अपराध ऐसे लोक सेवक द्वारा उसके पदीय कृत्यों या कर्तव्यों के निर्वहन में की गई सिफारिशों या लिए गए विनिश्चय से संबंधित है, -

(क) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो उस समय जब वह अपराध अभिकथित रूप से किया गया था. संघ के कार्यों के संबंध में नियोजित है या था, उस सरकार के पूर्व अनुमोदन के बिना नहीं करेगा;

(ख) ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो उस समय जब वह अपराध अभिकथित रूप से किया गया था, किसी राज्य के कार्यों के संबंध में नियोजित है या था, उस सरकार के पूर्व अनुमोदन के बिना नहीं करेगा;

(ग) किसी अन्य व्यक्ति की दशा में, उस समय जब वह अपराध अभिकथित रूप से किया गया था, उसे उसके पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी के पूर्व अनुमोदन के बिना नहीं करेगा :

परन्तु ऐसा कोई अनुमोदन किसी व्यक्ति को अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए असम्यक् लाभ प्रतिगृहीत करने या प्रतिगृहीत करने का प्रयत्न करने के आरोप पर घटनास्थल पर ही गिरफ्तार करने संबंधी मामले में आवश्यक नहीं होगा:

परन्तु यह और कि संबद्ध प्राधिकारी इस धारा के अधीन अपने विनिश्चय की सूचना तीन मास की अवधि के भीतर देगा, जिसे लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से उस प्राधिकारी द्वारा एक मास की और अवधि के लिए बढ़ाया जा सकेगा ।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

14. श्री प्रसाद ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता को जाल बिछाकर की गई कार्रवाई के दौरान गिरफ्तार किया गया था, जिसे मौके पर की गई गिरफ्तारी माना जाएगा। इस तर्क के समर्थन में, उन्होंने **केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम संतोष करनानी: 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 427** वाद में दिए गए निर्णय का हवाला दिया है; माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17-क के अंतर्गत अनिवार्य की गई जाँच की पूर्व स्वीकृति प्राप्त नहीं की गई थी, और इसलिए अभियुक्त के विरुद्ध प्रारंभ की गई कार्रवाई निरस्त मानी जानी चाहिए। इस वाद के तथ्य यह थे कि अभियुक्त - प्रतिवादी संख्या 1 ने दिनांक 29.09.2022 को शिकायतकर्ता से संपर्क किया था और उससे दिनांक 03.10.2022 को मिलने के लिए कहा था। शिकायतकर्ता उससे आयकर कार्यालय में मिला, जहाँ उसने शिकायतकर्ता के एक वाद में सहायता करने के बदले 30 लाख रुपये की विधि विरुद्ध परितोषण की मांग की। शिकायतकर्ता ने इस वार्तालाप को एक डिजिटल वॉयस रिकॉर्डर में रिकॉर्ड कर लिया, जिसे बाद में अन्वेषण अधिकारियों को सौंप दिया गया। शिकायतकर्ता को निर्देश दिया गया कि वह यह रकम 'धारा अंगड़िया फर्म' में कार्यरत 'वर्धमान' नाम के एक व्यक्ति के खाते में जमा करा दे। शिकायतकर्ता ने अगली सुबह ही इसकी शिकायत दर्ज करा दी, जिसके बाद एक जाल बिछाया गया। शिकायतकर्ता के एक कर्मचारी को भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो की ट्रैप टीम के सदस्यों के साथ 30 लाख रुपये की रिश्वत की रकम देकर भेजा गया। धारा अंगड़िया फर्म में 30 लाख रुपये जमा कराने के बाद, शिकायतकर्ता ने व्हाट्सएप कॉल द्वारा अभियुक्त से संपर्क किया। भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो टीम ने इस कॉल को रिकॉर्ड कर लिया, जिसमें अभियुक्त ने धनराशि प्राप्त होने की बात स्वीकार की। इसके तुरंत बाद, भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो की एक टीम अभियुक्त को हिरासत में लेने और गिरफ्तार करने के लिए वहाँ पहुँची। लेकिन, अभियुक्त ने अपने कुछ कर्मचारियों के साथ मिलकर भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो टीम पर शारीरिक हमला कर दिया और वहाँ मची अफरा-तफरी का फायदा उठाकर कार्यालय से फरार हो गया। कार्यालय से भागते समय, अभियुक्त ने अपना मोबाइल फ़ोन अपने एक सहकर्मी को सौंप दिया। इसी दौरान, भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो की एक दूसरी टीम ने धारा अंगड़िया फर्म में जमा कराई गई रिश्वत की रकम बरामद कर ली। उपरोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभियुक्त के इस तर्क को खारिज करते हुए निम्नवत धारित किया : -

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"33. धारा 17क में मात्र यह प्रावधान है कि पुलिस अधिकारी किसी भी ऐसे अपराध के संबंध में कोई प्रारंभिक जाँच, पूछताछ या अन्वेषण तब तक प्रारंभ नहीं कर सकते, जिसे कारित करने का आरोप किसी सरकारी कर्मचारी पर लगा हो—और वह कथित अपराध उस कर्मचारी द्वारा अपने सरकारी कर्तव्यों या कार्यों के निर्वहन के दौरान की गई किसी सिफारिश या लिए गए किसी निर्णय से जुड़ा हो—जब तक कि उन्हें सक्षम प्राधिकारी से इसकी पूर्व-स्वीकृति न मिल गई हो। हालाँकि, इस धारा के प्रथम परंतुक में यह स्पष्ट किया गया है कि ऐसे मामलों में सक्षम प्राधिकारी की पूर्व-स्वीकृति आवश्यक नहीं है, जिनमें किसी व्यक्ति को 'अनुचित लाभ' स्वीकार करने के आरोप में मौके पर ही गिरफ्तार किया जाता है।"

34. जैसा कि देखा जा सकता है, धारा 17क का प्रथम परंतुक ऐसे मामलों का उल्लेख करता है जिनमें किसी लोक सेवक पर कोई अनुचित लाभ स्वीकार करने या ऐसा करने का प्रयास करने का आरोप लगाया गया हो। किसी ट्रैप के मामले में ऐसे अधिकारी के अन्वेषण लिए पूर्वस्वीकृति या अनुमति लेना, ट्रैप और अन्वेषण के मूल उद्देश्य को ही विफल कर सकता है, जो कि विधायिका का अंतर्निहित आशय नहीं है। प्रतिवादी संख्या 1 के विरुद्ध जाँच के लिए—चूँकि उस पर रिश्त माँगने का आरोप था—केंद्र सरकार की किसी पूर्वस्वीकृति की आवश्यकता नहीं थी। इसके अतिरिक्त प्रतिवादी संख्या 1 पर लगाया गया आरोप, उसकी अर्ध-न्यायिक या प्रशासनिक क्षमता में की गई किसी भी सिफारिश या लिए गए निर्णयों से संबंधित नहीं है।

15. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम संतोष करनानी (उपर्युक्त) के वाद का अनुसरण, सुरेंद्र धारीवाल बनाम राजस्थान राज्य और अन्य आपराधिक अपील संख्या 3717-3718 वर्ष 2025, दिनांक 25.08.2025 को निर्णीत वाद में किया गया है।

16. केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम संतोष करनानी (उपर्युक्त) के वाद में, अभियुक्त को ट्रैप के दौरान मौके पर गिरफ्तार नहीं किया जा सका था और वह फरार हो गया था; फिर भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह धारित किया कि रिश्त माँगने के अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध अन्वेषण हेतु केंद्र सरकार की किसी भी पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती है। वर्तमान वाद में भी, याचिकाकर्ता को मौके पर गिरफ्तार नहीं किया गया था, बल्कि उसे ट्रैप की कार्यवाही के एक भाग के रूप में गिरफ्तार किया गया था और वह रिश्त माँगने का आरोपी है। इसलिए, केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो बनाम संतोष करनानी (उपर्युक्त) के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विधि के आलोक में, याचिकाकर्ता के विरुद्ध जांच के लिए सरकार की किसी भी पूर्व स्वीकृति की आवश्यकता नहीं थी; और याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह प्रथम तर्क कि अभियोजन स्वीकृति के अभाव में सम्पूर्ण कार्यवाही दूषित हो गई है, उसमें कोई बल नहीं है और उसे अस्वीकार किया जाता है।

17. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के द्वितीय तर्क के उत्तर में केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव, याचिकाकर्ता के प्रतिनिधि के रूप में भी कार्य करता था। जांच में यह स्थापित हो चुका है कि उसने याचिकाकर्ता के निर्देशों पर और उसकी ओर से धन की मांग की थी और उसे प्राप्त किया था। मेरा यह मत है कि क्या जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव ने याचिकाकर्ता के निर्देशों पर और उसकी ओर से रिश्त की राशि की मांग की थी और उसे स्वीकार किया था, यह एक तथ्यात्मक प्रश्न है जिसका निर्णय विचारण न्यायालय द्वारा किया जाना है। इस स्तर पर इस विवाद की गहराई में नहीं जाया जा सकता है; और इस स्तर पर, मात्र इतना ही पर्याप्त है कि प्रथम दृष्ट्या जांच में यह स्थापित हो चुका है कि जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव ने याचिकाकर्ता के निर्देशों पर और उसकी ओर से रिश्त की राशि की मांग की थी और उसे स्वीकार किया था। इसलिए, प्रार्थी के विद्वान अधिवक्ता के दूसरे तर्क को अस्वीकार किया जाता है।

18. विद्वान अधिवक्ता के तृतीय तर्क का उत्तर प्रस्तुत करते हुए, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रतिशपथपत्र में यह कहा गया है कि शिकायत का प्रथम पूर्व सत्यापन दिनांक 12.12.2023 को किया गया था और द्वितीय पूर्व सत्यापन दिनांक 13.12.2023 को किया गया था। इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 13.12.2023 को बिलों के संसाधन की प्रक्रिया से पूर्व ही शिकायत दर्ज की जा चुकी थी; और यह तर्क कि याचिकाकर्ता ने शिकायत दर्ज होने से पूर्व ही भुगतान प्रक्रिया संपन्न कर दी थी, और यह तर्क भी निराधार है कि भुगतान प्रक्रिया संपन्न करने के बाद उसे रिश्त मांगने का कोई अवसर नहीं मिला।

19. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के चतुर्थ तर्क के संबंध में, जिसमें कहा गया है कि केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने प्रतिशपथपत्र में यह स्वीकार किया है कि शिकायतकर्ता की दूरभाष पर हुए वार्तालाप को त्रुटिवश शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के मध्य वार्तालाप संदर्भित किया गया था, जबकि वास्तव में वह वार्तालाप शिकायतकर्ता और सह-अभियुक्त जितेंद्र के बीच हुआ था; इस पर केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विद्वान अधिवक्ता ने यह बताया है कि यह त्रुटि मात्र एक वार्तालाप के संबंध में हुई है, और अन्य वार्तालापों की रिकॉर्डिंग भी उपलब्ध हैं जो याचिकाकर्ता

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

द्वारा रिश्त मांगने की बात को सिद्ध करती हैं। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए इस उत्तर का खंडन नहीं किया, और यह वाद यहीं समाप्त हो जाता है।

20. इस अंतिम तर्क के समर्थन में कि इस आरोप को सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 05.12.2023 और 07.12.2023 को शिकायतकर्ता को रिश्त मांगने के लिए फ़ोन किया था, श्री पूर्णेंद्र चक्रवर्ती ने राज्य द्वारा सीबीआई बनाम डॉ. अनूप कुमार श्रीवास्तव: (2017) 15 एससीसी 560' वाद में दिए गए निर्णय का संदर्भ प्रस्तुत किया है। उस वाद में, आरोपपत्र में यह आरोप लगाया गया था कि प्रतिवादी (जो दिल्ली-1 कमिश्नर में सेंट्रल एक्साइज कमिश्नर के पद पर तैनात था), विभाग के अन्य लोगों और एक निजी व्यक्ति हेमंत गांधी के साथ मिलकर, श्री दिलीप अग्रवाल और आनंद अग्रवाल के परिसर में अवैध परितोष प्राप्त करने के उद्देश्य से फ़र्जी छापा मारने की योजना बनाई थी। फ़ोन पर हुए वार्तालाप से यह पता चला कि तलाशी का एकमात्र आशय अवैध धन की वसूली करना था; परिसर के मालिकों पर अवैध देने का दबाव डाला गया, और अंततः 60 लाख रुपये में मामला निपटा। ऐसा कहा जाता है कि एक निजी व्यक्ति, हेमंत गांधी ने, फ़ोन पर तलाशी के दौरान मिली चीजों, मिशन की सफलता और 60 लाख रुपये के समझौते के बारे में इशारों में जानकारी दी। उसने "मिशन सफल" और "छह शून्य" जैसे शब्दों का इस्तेमाल किया, और इस पर प्रतिवादी ने "ठीक है" कहकर अपनी सहमति दी। महेंद्र कपूर और हेमंत गांधी के बीच हुए वार्तालाप में "मिशन सफल" और "छह शून्य" शब्दों का ही प्रयोग किया गया था। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि: -

31. ...यह सिद्ध नहीं हुआ है कि वे उसी छापे के बारे में बात कर रहे थे क्योंकि उन्होंने कुछ अन्य गुप्त संकेतों का प्रयोग किया है जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जिससे कॉल द्वारा प्रतिवादी के अपराध कारित करने से संबद्ध करना अत्यधिक अनाधिसंभाव्य हो जाता है। इसके अतिरिक्त कॉल संख्या 51 में, संदेह का लाभ प्रतिवादी को दिया जाना चाहिए क्योंकि कॉल की भाषा संदिग्ध है और वास्तविक वार्तालाप का कोई तार्किक निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। इसके अतिरिक्त "छह शून्य" की राशि के संबंध में किसी भी विवरण के अभाव में, हमारा मानना है कि कॉल संख्या 48 स्पष्ट रूप से यह दर्शाती है कि प्रतिवादी को कथित आपराधिक षड्यंत्र की कोई जानकारी नहीं थी और कॉल संख्या 51 भी अपराध में अभियुक्त की संलिप्तता को सिद्ध करने में असमर्थ है क्योंकि यह संदर्भ से परे वार्तालाप है। उपरोक्त के दृष्टिगत, हमारा यह मत है कि कॉल संख्या 48 और 51, अभियोजन पक्ष द्वारा अत्यधिक विश्वास किए जाने के बावजूद, अपराध में प्रतिवादी की संलिप्तता सिद्ध करने के उद्देश्य की पूर्ति नहीं करती।

21. उपरोक्त निर्णय उन विशिष्ट तथ्यों को ध्यान में रखकर प्रदान किया गया था, जहाँ दूरभाष पर हुआ वार्तालाप गूढ़ थी और उससे रिश्त की माँग सिद्ध नहीं होती थी; जबकि इस वाद में दूरभाष पर हुए वार्तालाप के

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्रतिलेख से स्पष्ट रूप से रिश्त की माँग सिद्ध होती है। इसलिए, डॉ. अनूप कुमार श्रीवास्तव (उपरोक्त) वाद इस वाद के तथ्यों पर लागू नहीं होगा।

22. नीरज दत्ता बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार): (2023) 4 एससीसी 731, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई पूर्व निर्णयों पर विचार किया और विधि को इस प्रकार सारगर्भित किया: -

"88.1. (क) अभियोजन पक्ष द्वारा किसी सरकारी कर्मचारी द्वारा अवैध परितोषण की मांग और उसे स्वीकार किए जाने को एक विवादक के रूप में सिद्ध करना, अधिनियम की धारा 7 और 13 (1)(घ) (i) और (ii) के अंतर्गत अभियुक्त सरकारी कर्मचारी के अपराध को स्थापित करने के लिए एक अनिवार्य शर्त है।

88.2. (ख) अभियुक्त के अपराध को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन पक्ष को सर्वप्रथम अवैध परितोषण की मांग और तत्पश्चात उसे स्वीकार किए जाने को एक तथ्य के रूप में सिद्ध करना होगा। इस विवादित तथ्य को प्रत्यक्ष साक्ष्यों द्वारा सिद्ध किया जा सकता है, जो मौखिक साक्ष्य या दस्तावेजी साक्ष्यों के रूप में हो सकते हैं।

88.3 (ग) इसके अतिरिक्त विवादक — अर्थात्, अवैध परितोषण की मांग और उसे स्वीकार किए जाने का साक्ष्य—प्रत्यक्ष मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों की अनुपस्थिति में परिस्थितिजन्य साक्ष्यों द्वारा भी सिद्ध किया जा सकता है।

88.4 (घ) विवादक — अर्थात्, सरकारी कर्मचारी द्वारा अवैध परितोषण की मांग और उसे स्वीकार किए जाने—को सिद्ध करने के लिए, निम्नलिखित पक्षों को ध्यान में रखना होगा:

(i) यदि रिश्त देने वाला व्यक्ति सरकारी कर्मचारी की किसी मांग के बिना स्वयं ही रिश्त देने का प्रस्ताव करता है, और सरकारी कर्मचारी उस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है और अवैध परितोष प्राप्त कर लेता है, तो यह अधिनियम की धारा 7 के अनुसार 'स्वीकृति' का वाद है। ऐसे वाद में, सरकारी कर्मचारी द्वारा पहले से कोई मांग किया जाना आवश्यक नहीं है।

(ii) दूसरी ओर, यदि सरकारी कर्मचारी रिश्त की मांग करता है, और रिश्त देने वाला व्यक्ति उस मांग को स्वीकार कर लेता है तथा मांगी गई रिश्त देता है, जिसे सरकारी कर्मचारी प्राप्त कर लेता है, तो यह

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

'प्राप्ति' का मामला है। 'प्राप्ति' के मामले में, अवैध परितोष की मांग सरकारी कर्मचारी की ओर से ही की जाती है। यह अधिनियम की धारा 13 (1)(घ)(i) और (ii) के अंतर्गत एक अपराध है।

(iii) ऊपर दोनों मामलों में, रिश्त देने वाले द्वारा प्रस्ताव और सरकारी कर्मचारी द्वारा मांग को, क्रमशः, अभियोजन पक्ष द्वारा विवादक तथ्य के रूप में सिद्ध किया जाना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में, मात्र अवैध परितोष को स्वीकार करना या प्राप्त करना—बिना किसी अन्य अतिरिक्त बात के— क्रमशः अधिनियम की धारा 7 या धारा 13 (1)(घ), (i) और (ii) के अंतर्गत कोई अपराध नहीं माना जाएगा।

इसलिए, अधिनियम की धारा 7 के अंतर्गत, अपराध को सिद्ध करने के लिए, एक ऐसा प्रस्ताव होना चाहिए जो रिश्त देने वाले की ओर से आया हो और जिसे सरकारी कर्मचारी ने स्वीकार किया हो; तभी यह एक अपराध माना जाएगा। इसी प्रकार, यदि सरकारी कर्मचारी द्वारा की गई पूर्व मांग को रिश्त देने वाला स्वीकार कर लेता है और बदले में भुगतान करता है, जिसे सरकारी कर्मचारी प्राप्त कर लेता है, तो यह अधिनियम की धारा 13 (1)(घ) और (i) तथा (ii) के अंतर्गत 'प्राप्ति' का अपराध माना जाएगा।

88.5 (ड) अवैध रिश्त की मांग और स्वीकृति या प्राप्ति के संबंध में 'तथ्य की उपधारणा' किसी न्यायालय द्वारा केवल तभी की जा सकती है, जब उसके आधारभूत तथ्य प्रासंगिक मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों द्वारा सिद्ध हो चुके हों; साक्ष्यों के अभाव में ऐसी उपधारणा नहीं की जा सकती। अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर, न्यायालय के पास यह विवेकाधिकार होता है कि वह इस बात पर विचार करते समय कि क्या मांग का तथ्य अभियोजन पक्ष द्वारा सिद्ध किया गया है या नहीं, 'तथ्य की उपधारणा' कर सकता है। निस्संदेह, 'तथ्य की उपधारणा' अभियुक्त द्वारा खंडन किए जाने के अधीन होती है; और यदि अभियुक्त द्वारा कोई खंडन नहीं किया जाता, तो वह उपधारणा यथावत बनी रहती है।

88.6 (च) यदि शिकायतकर्ता 'पक्षद्रोही' हो जाता है, या उसकी मृत्यु हो गई है, या वह विचारण के दौरान अपना साक्ष्य देने के लिए उपलब्ध नहीं है, तो अवैध परितोष की मांग को किसी अन्य साक्षी के साक्ष्य के माध्यम से सिद्ध किया जा सकता है – जो मौखिक रूप से या दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साक्ष्य दे सकता है – अथवा अभियोजन पक्ष परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर वाद को सिद्ध कर सकता है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

ऐसे में न तो विचारण समाप्त होता है, और न ही इसके परिणामस्वरूप अभियुक्त लोक सेवक को बरी करने का आदेश दिया जाता है।

88.7 (छ) जहाँ तक अधिनियम की धारा 7 का संबंध है, विवाद्यक के सिद्ध हो जाने पर, धारा 20 न्यायालय को यह उपधारणा करने का निर्देश देती है कि अवैध परितोष का उद्देश्य वही 'हेतु' या 'इनाम' था, जिसका उल्लेख उक्त धारा में किया गया है। न्यायालय द्वारा यह उपधारणा एक 'विधिक उपधारणा' के रूप में की जानी अनिवार्य है। निस्संदेह, यह उपधारणा भी 'खंडन' के अधीन होती है। धारा 20, अधिनियम की धारा 13 (1) (घ) (i) और (ii) पर लागू नहीं होती है।

88.8 (ज) हम यह स्पष्ट करते हैं कि अधिनियम की धारा 20 के अंतर्गत 'विधिक उपधारणा', ऊपर बिंदु (ड) में संदर्भित 'तथ्यात्मक उपधारणा' से भिन्न है; क्योंकि पूर्वोक्त उपधारणा अनिवार्य प्रकृति की है, जबकि परोक्त उपधारणा विवेकाधीन प्रकृति की है।

23. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह निवेदन कि याचिकाकर्ता द्वारा कथित अपराध किए जाने का प्रथम दृष्टया भी कोई प्रमाण नहीं है, सही नहीं है और प्रति-शपथपत्र के साथ पर्याप्त प्रमाण संलग्न किए गए हैं, जिनमें शिकायतकर्ता और याचिकाकर्ता के बीच हुई टेलीफोन वार्तालाप के प्रतिलेख सम्मिलित हैं।

24. उपलब्ध सामग्री से याचिकाकर्ता पर कथित अपराधों के लिए वाद चलाने का प्रथम दृष्टया वाद बनता है। चूंकि अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोपों की सत्यता और याचिकाकर्ता द्वारा लिए गए बचाव की जांच विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा की जानी है, इसलिए यह न्यायालय आरोपों और प्रत्यारोपों की विस्तृत जांच करने से विरत रहता है, और मात्र यह टिप्पणी ही पर्याप्त है कि आरोप और उनके समर्थन में प्रति-शपथ पत्र के साथ प्रस्तुत सामग्री स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता पर विचारण का मामला बनाती है।

25. उपरोक्त चर्चाओं के आलोक में, मुझे याचिका में कोई बल प्रतीत नहीं होता, जिसे तदनुसार खारिज किया जाता है। तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि विचारण न्यायालय इस आदेश में की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना, वाद का निर्णय उसके गुण-दोष के आधार पर करेगा।

(न्यायमूर्ति सुभाष विद्यार्थी)

30 मार्च, 2026

राम

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।